शिक्षण को शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए एक अनिवार्य गतिविधि माना जाता है। जब भी सिखाने की प्रक्रिया में शिक्षण का प्रयोग किया जाता है उसमें ज्ञानमीमांसीय, मनोवैज्ञानिक, सीखने वाले और शिक्षा के लक्ष्यों संबंधी अनेक पूर्वमान्यताएं निहित होती हैं। जैसे, सीखने वाला खाली घड़े की भांति होता है और शिक्षण के जरिए उसमें ज्ञान भरा जाना है या विभिन्न सूचनाओं अथवा जानकारियों के बारे में पता होना ही ज्ञान है या ज्ञान परिवेश से व्यक्ति की अन्तःक्रिया से अर्जित होता है और इसके माध्यम से शिक्षार्थी स्वायत्त बनता है; इत्यादि। इन पूर्वमान्यताओं का शिक्षण के चरित्र पर असर आता है। यह लेख इन्हीं पूर्वमान्यताओं के संदर्भ में शिक्षण के तीन मॉडलों की विवेचनात्मक व्याख्या करता है।

इसरायल शेफलर

शिक्षण के दार्शनिक मॉडल

1. परिचय

शिक्षण को ऐसी गतिविधि के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है जिसका उद्देश्य सिखाना है और यह काम इस तरह से किया जाता है कि शिक्षार्थी की बौद्धिक ईमानदारी और स्वतंत्र निर्णय लेने की क्षमता का सम्मान भी किया जाए। ऐसा वर्गीकरण कम से कम दो वजहों से महत्त्वपूर्ण है : पहला यह कि यह शिक्षण के मूल स्वभाव को सामने लाता है जो शिक्षण के व्यवहारवादी चरणों की निश्चित संरचनाबद्ध शृंखला की बजाय शिक्षण को उद्देश्योन्मुख कार्य बनाता है और दूसरा यह कि यह शिक्षण को प्रचार, अनुकूलन, सलाह और दिमाग में भरने जैसे उन कार्यों से अलग करता है जिनका लक्ष्य व्यक्ति को बदलना तो होता है लेकिन जो इन मुद्दों पर व्यक्ति की वास्तविक राय और निर्णय को कोई महत्त्व नहीं देते।

लेकिन साथ ही मुझे ठीक लगने वाला शिक्षण का यह वर्गीकरण शिक्षक के कई महत्त्वपूर्ण प्रश्नों का उत्तर नहीं दे पाता : मेरा लक्ष्य किस तरह का सिखाना होना चाहिए ? ऐसे सिखाने में क्या-क्या शामिल होगा ? मैं यह काम किस तरह करूंगा ? ऐसे प्रश्न क्रमशः मानदण्ड संबंधी, ज्ञानमीमांसा संबंधी और आनुभविक अर्थ में हैं और इनके उत्तर शैक्षिक उद्यमों को मजबूती देते हैं। इन प्रश्नों के उत्तर अलग-अलग तलाशने की बजाय मैं इन पर एक सामूहिक प्रश्न की तरह ध्यान देना चाहूंगा और इसलिए शिक्षण के तीन प्रभावित करने वाले मॉडलों की बात करना चाहूंगा, जो कम से कम कुछ जवाब तो सुझाते ही हैं। इन मॉडलों का लक्ष्य ज्ञानमीमांसा, मनोवैज्ञानिक और मानदण्डात्मक तत्वों से शिक्षण की एक तस्वीर बनाना नहीं है। सभी मॉडलों की तरह वे विषय को आसान या सामान्यीकृत करते हैं लेकिन ऐसा सामान्यीकरण विषय की महत्त्वपूर्ण विशेषताओं को

लेखक परिचय

बीसवीं शताब्दी के ख्यातनाम अमेरीकी शिक्षा दार्शनिक, हार्वर्ड यूनिवर्सिटी में दर्शन एवं शिक्षा के प्रोफेसर, फोर्ड फाउन्डेशन के फेलो रहे, वर्तमान में हार्वर्ड कॉलेज के अध्यक्ष और फेलो।

पुस्तकें : फिलॉसोफी एण्ड एज्युकेशन, द एनाटॉमी ऑफ इनक्वारी, साइंस एण्ड सब्जेक्टीविटी, कन्डीशंस ऑफ नॉलेज, रीजन एण्ड टीचिंग।

पहचानने के लिए एक सही तरीका है। हर मामले में पहला मुद्दा तो यही है कि क्या ये विशेषताएं महत्त्वपूर्ण हैं, क्या हमें अपनी शैक्षणिक सोच को ऐसे मॉडल से नियंत्रित होने देना चाहिए जो उन विशेषताओं पर निर्भर है या फिर हमें उस मॉडल पर ही सवाल उठाने चाहिएं। हालांकि मै हर मॉडल के ऐतिहासिक संदर्भ की चर्चा करूंगा लेकिन ऐतिहासिक शुद्धता का कोई दावा मैं नहीं करता। मेरा उद्देश्य अधिक व्यवस्थित और द्वंद्वात्मक रूप से तीनों मॉडलों को परखना है और यह देखना है कि शिक्षण की संतोषजनक अवधारणा की हमारी तलाश में वे हमारी कितनी मदद करते हैं। इसलिए मैं सबसे पहले मॉडल, 'प्रभाव मॉडल' की ओर रुख करता हूं।

2. प्रभाव मॉडल

प्रभाव मॉडल शायद तीनों में सबसे आसान और सबसे लोकप्रिय है। यह दरअसल दिमाग की तस्वीर ऐसी बनाता है कि वह ग्रहण किए गए बाहरी प्रभावों को छांटता है और उनका भंडारण करता है। शिक्षण का वांछित अन्तिम परिणाम है कि शिक्षार्थी में कुछ मूल तत्व डाले जा सकें जो मानक तरीकों से संगठित और प्रक्रियाबद्ध हो लेकिन उन्हें शिक्षार्थी ने स्वयं न उत्पन्न किया हो। इस मॉडल का अनुभववादी संस्करण जॉन लॉक से जुड़ा है जो मानता है कि सीखने की प्रक्रिया में अनुभूति और प्रतिक्रिया के सामान्य विचार भीतर जाते हैं जिन्हें मस्तिष्क द्वारा एकत्रित, संबंधित, सामान्यीकृत और संग्रहीत किया जाता है। जन्म के समय दिमाग बिलकुल खाली होता है और उसका निर्माण अनुभवों से ही होता है जो भविष्य में काम आने के लिए उपलब्ध रहते हैं। लॉक के शब्दों में ही (*ऐस्से कन्सर्निंग ह्यूमन अन्डरस्टेण्डिंग,* पुस्तक 2, अध्याय 1, खण्ड 2 से):

> हम मानते हैं कि दिमाग कोरे कागज की तरह होता है जिस पर कोई अक्षर नहीं लिखा गया है। फिर यह भरता कैसे जाता है ? आदमी की व्यस्त और अनंत कल्पनाएं इस पर असीम प्रकार के चित्र कैसे और कब उकेर देती हैं ? कारण और ज्ञान की सारी सामग्री इसे कब मिलती है ? एक शब्द में इनका उत्तर है- अनुभव। अनुभव से ही सारा ज्ञान बनता है और बढ़ता है। बाहरी प्रत्यक्ष वस्तुओं का हमारा अवलोकन या दिमाग की आंतरिक क्रियाओं को अपने आप ग्रहण करना और प्रतिक्रिया देना ही हमारी समझ को बढ़ाता है जिससे हम सोच पाते हैं। यही वे दो स्रोत हैं जिनसे हमारे सब विचार आते हैं या आ सकते हैं।

इसलिए शिक्षण को मानसिक शक्तियों को विचारों को ग्रहण करने और विकसित करने में लगाना चाहिए, विशेषकर अनुभव, भेदभाव, प्रतिधारण, संयोजन, अमूर्तन और प्रतिनिधित्व की शक्तियों को। लेकिन महत्त्वपूर्ण यह है कि शिक्षण आने वाली सूचनाओं का चुनाव और संगठन करे। इसीलिए शिक्षक के पास बहुत शक्ति है। संवेदी इकाइयों को मिलने वाली सूचनाओं को नियंत्रित करके वह बहुत हद तक दिमाग को आकार दे सकता है। जैसा डिवी ने कहा है :

> लॉक के कथन मस्तिष्क और पदार्थ, दोनों के साथ ही न्याय करते लगते हैं। इनमें से एक ज्ञान की सामग्री और पदार्थ उपलब्ध कराता है जिस पर मस्तिष्क अपना काम करता है। अन्य निश्चित मानसिक शक्तियां देता है जो संख्या में कम हैं और जिन्हें विशेष प्रक्रियाओं द्वारा प्रशिक्षित किए जाने की जरूरत है।

बच्चे में सीखने की प्रक्रिया को ज्ञान की वृद्धि के समांतर रखा जा सकता है क्योंकि पूरा ज्ञान अनुभव की मौलिक इकाइयों से ही बनता है, जो समूहबद्ध, संबंधित और सामान्यीकृत होती जाती हैं। इसलिए शिक्षक का मकसद उन तथ्यों को उपलब्ध करवाना होना

> *विवेक मनुष्य की गरिमा का अभिन्न पहलू है और मानव-जाति का विवेकवान लक्ष्य है कि ऐसा समाज बन सके, जिसमें यह गरिमा बढ़े, ऐसा समाज जिसमें स्वतंत्र विवेकशील प्रतिनिधियों और अंतर्राष्ट्रीय लोकतांत्रिक जनता से जुड़े मसलों पर विवेकपूर्ण निर्णय लिया जा सके। शिक्षा का उद्देश्य व्यापक अर्थ में चरित्र का विकास करना अर्थात् सैद्धांतिक सोच और कार्य का विकास करना है, जिससे मनुष्य की गरिमा दिखाई दे सके।*

चाहिए जो अपने-आपमें भी महत्त्वपूर्ण हैं और इतने समृद्ध हैं कि सीखने वाले के दिमाग में वयस्क ज्ञान के विकास में निरंतर मदद करता है।

जैसा मैंने बताया है, प्रभाव मॉडल के कई मजबूत पक्ष हैं। यह सभी दावों और सिद्धांतों के परीक्षण में अनुभव की आवश्यकता को आलोचना के सामान्य उपकरण की तरह रखता है और मांग करता है कि वे इस पर खरे उतरें। निश्चित रूप से ऐसी मांग ठीक भी है क्योंकि हर ज्ञान किसी न किसी रूप में अनुभव पर निर्भर होता है। दूसरी तरफ, प्रभाव मॉडल के अनुसार मस्तिष्क विभिन्न अनुभवों से ही बनता है और अनुभवों से विकसित भी होता है। इसीलिए शैक्षणिक योजना की प्रक्रिया में बच्चे के अनुभवों की विविधता और समृद्धि महत्त्वपूर्ण है।

लेकिन प्रभाव मॉडल के सामने कई घातक मुश्किलें भी हैं। बिलकुल सामान्य विचारों और अभ्यास से सुधरने वाली अमूर्त मानसिक शक्तियों के विचार की कई बार मिथकीय कहकर भी आलोचना की गई है : सरलता एक निरपेक्ष अवधारणा न होकर सापेक्ष है और अनुभवों का विश्लेषण करने का एक तरीका बताती है; संक्षेप में कहें तो यह प्रदत्त नहीं होती, बल्कि बनाई जाती है और मानसिक शक्तियां जो विषयवस्तु के साथ नहीं बदलतीं, सब जानते हैं कि व्यवहारिक और सैद्धांतिक आधार पर मनोविज्ञान से जुड़ी हैं। अधिक मूलभूत आलोचना शायद यह है कि ज्ञान की वृद्धि की अंतर्निहित अवधारणा ही झूठी है। संवेदी इकाइयों द्वारा की गई कुछ निश्चित क्रियाओं से ज्ञान प्राप्त नहीं होता। सबसे पहले तो ज्ञान भाषा में छिपा है और उसका सैद्धांतिक तंत्र संवेदी आंकड़ों से नहीं बनता बल्कि उन पर लागू किया जाता है। यह मानव मस्तिष्क में भी नहीं बनता बल्कि बहुत हद तक यह अनुमान लगाने और खोज करने से बनता है, जो संस्कृति और परंपराओं से होता है। ज्ञान में सिद्धांत की भी आवश्यकता होती है और यदि यह भी मान लिया जाए कि आंकड़े इस सैद्धांतिक तंत्र से संगठित भी किए गए हैं, तब भी सिद्धांत उनके सामान्यीकरण से नहीं बनते। सिद्धांत एक सृजनात्मक और व्यक्तिगत उद्यम है जो आंकड़ों से कई वजहों से आगे है। उसमें सामान्यीकरण मात्र से ही नहीं, संस्थाओं की अभिधारणा, समानताओं का वितरण, तुलनात्मक सरलता का मूल्यांकन और नई भाषाओं की खोज भी शामिल होती हैं। ज्ञान के निर्माण में अनुभव इसलिए प्रासंगिक है, क्योंकि इसके द्वारा हम अपने सिद्धांतों को परख सकते हैं; लेकिन मानव मस्तिष्क के ही प्रसंस्कृत होने के बावजूद वे अपने-आपके सिद्धांतों को नहीं गढ़ते। इसलिए हमारे पास जो सिद्धांत हैं, वे मानव मस्तिष्क के बारे में ही नहीं, बल्कि हमारे इतिहास और बौद्धिक विरासत के बारे में भी हमें बताते हैं।

सीखने की प्रक्रिया में, बच्चा इन्द्रिय अनुभव ही नहीं बल्कि विभेदनीय संदर्भों से जटिल रूप से जुड़ी विरासत का सिद्धांत और भाषा भी प्राप्त करता है। वह अतीत की बुद्धि के असंख्य सृजनात्मक कार्यों के आधार पर बने विश्वास की जटिल संस्कृति का वंशज है और दुनिया का एक प्रारूप चित्र बनाता है। बच्चे को इन्द्रिय अनुभवों और तथ्यों का सबसे समृद्ध समूह देने मात्र से यह जरूरी नहीं कि उसमें ज्ञान जैसा कुछ विकसित हो। नए संदर्भ में उस ज्ञान को लागू करने और उसे पुनः सृजित करने की क्षमता का विकास तो दूर की बात है।

प्रभाव मॉडल का एक मौखिक संस्करण अभी पढ़े गए इसके इन्द्रिय अनुभव संस्करण से बेहतर होने का दावा करता है : दिमाग पर सिर्फ इन्द्रिय अनुभवों का ही नहीं, भाषा और स्वीकार किए गए सिद्धांत का भी प्रभाव पड़ता है। हमें सिर्फ इन्द्रिय अनुभव से प्राप्त आंकड़े ही नहीं बल्कि संबंधित मौखिक प्रारूप अर्थात् उन आंकड़ों से संबंधित वे कथन जो हम खुद भी स्वीकार करते हैं, देने की जरूरत होती है। शिक्षार्थी का ज्ञान उन कथनों के रूप में ही संगठित होता है जिन्हें वह भविष्य में नई परिस्थितियों में इस्तेमाल कर सकता है। इसलिए अब वह पहले की तरह अपने इन्द्रिय अनुभव से प्राप्त आंकड़ों को निश्चित तरीकों से विकसित करके ही हमारी सैद्धांतिक विरासत नहीं बनाता बल्कि उस विरासत का एक हिस्सा हम स्वयं उसे देते हैं।

यह मौखिक संस्करण, जो समकालीन व्यवहारवाद के निकट है, इसमें अपने मूल संस्करण की अपेक्षा कुछ खूबियां हैं लेकिन इसमें कुछ त्रुटियां भी हैं जो इसे शिक्षण का अच्छा मॉडल नहीं बनने देतीं। स्वीकार किए गए सब सिद्धांतों का भंडारण और नए संदर्भ में उन्हें इस्तेमाल कर सकने की क्षमता, दो अलग-अलग चीजें हैं। इन्द्रिय अनुभव से प्राप्त आंकड़ों के साथ कुछ व्यवहारिक अंतर्संबंध हासिल कर भी लिया जाए, तब भी क्या यह उन सिद्धांतों के प्रति समझ पैदा करता है और न ही सैद्धांतिक प्रोत्साहन और प्रायोगिक प्रमाण ही देता है।

अन्ततः प्रभाव मॉडल के सभी संस्करणों में एक कमी है : उनमें सीखने वाले द्वारा किसी मौलिक खोज के लिए कोई जगह नहीं है। अंततः हम उसके दिमाग में वह सब तो नहीं भर सकते जो हम शिक्षण के अंतिम फल के रूप में उससे चाहते हैं। न ही हम यह अनुमान लगा सकते हैं कि हमारे द्वारा दिए गए पदार्थ से किन्हीं मानक तरीकों से उसमें कुछ अतिरिक्त महत्त्वपूर्ण जुड़ जाएगा। इसलिए हम अंतर्दृष्टि, सिद्धांतों का नया प्रयोग, नए सिद्धांत, उपलब्धियां, इतिहास, कविता और दर्शन का अर्थ नहीं समझते और न ही समझ सकते हैं। एक मूल अंतराल है जिसे शिक्षण शिक्षाक्रम के निवेश के पुनर्संगठन मात्र से ही नहीं भर सकता। यह अंतराल शिक्षक की शक्तियों और नियंत्रणों पर सैद्धांतिक सीमाएं लगाता है और जहां उसकी सीमा खत्म होती है, वहीं शिक्षा से जुड़ी उसकी उम्मीदें शुरू होती हैं।

3. अंतर्दृष्टि मॉडल

अगले जिस मॉडल की मैं बात करने जा रहा हूं, वह 'अंतर्दृष्टि मॉडल' है। जहां प्रभाव मॉडल यह मानता है कि शिक्षक विचारों या ज्ञान के टुकड़ों को शिक्षार्थी के दिमाग में संजो दे, वहीं अंतर्दृष्टि मॉडल ऐसी किसी प्रक्रिया की संभावना को नकारता है। यह मानता है कि ज्ञान का मसला दृष्टि से जुड़ा है और इसे प्राथमिक इन्द्रिय या मौखिक इकाइयों में बांटा नहीं जा सकता है और न ही एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में स्थानांतरित किया जा सकता है। एक शिक्षक अपने प्रयासों से इसके लिए अधिक से अधिक प्रेरित भर

कर सकता है और यदि इतना भी हो पाता है तो जितना किया गया है, यह उसका अतिक्रमण कर जाता है। दृष्टि विभिन्न अनुभवों को परिभाषित और संगठित करती है और उनकी सार्थकता बताती है। दृष्टिकोण या अंतर्दृष्टि ही याद किए गए वाक्यों को सुरक्षित रखने और फिर से बोल देने तथा उनका आधार और अनुप्रयोग समझने में अंतर पैदा करती है।

अंतर्दृष्टि मॉडल प्लेटो का दिया हुआ है लेकिन मैं यहां संत ऑगस्टाइन के संवाद 'शिक्षक' के संस्करण का हवाला दूंगा क्योंकि यह उन्हीं बिंदुओं पर बात करता है, जिन पर हमने अब तक चर्चा की है। ऑगस्टाइन लगभग इस तरह तर्क करते हैं : शिक्षक को भाषा के इस्तेमाल से ज्ञान संप्रेषित करने के लिए जाना जाता है। लेकिन ज्ञान या नया ज्ञान कार में सुने गए शब्द ही नहीं हैं। शब्द जब तक मन के लिए वास्तविकता के साथ कोई संबंध नहीं बनाते, तब तक वे शोर ही हैं। यहां एक विरोधाभास है : यदि शिक्षक के शब्दों से संप्रेषित होने वाली वास्तविकता को शिक्षार्थी पहले से ही जानता है तो शिक्षक उसे कुछ नया नहीं सिखा रहा। जबकि यदि वह उस वास्तविकता को पहले से नहीं जानता तो शिक्षक के शब्द उसके लिए कोई अर्थ नहीं रखते और केवल शोर बन जाते हैं। ऑगस्टाइन का निष्कर्ष है कि यथार्थ की सार्थकता से अलग भी भाषा का एक काम है : यह लोगों को किसी खास दिशा में प्रेरित करती है। शिक्षक के शब्द शिक्षार्थी को ऐसे नए यथार्थ के बारे में जानने के लिए प्रेरित करते हैं जिसे वह पहले से नहीं जानता। यह यथार्थ वह अपने आंतरिक दृष्टिकोण के कारण खोज पाता है और अपने लिए नए ज्ञान का सृजन करता है, यह अप्रत्यक्ष रूप से शिक्षक की प्रेरक गतिविधियों के कारण होता है। ऑगस्टाइन के अनुसार, किसी विशेषज्ञ के कहने पर किसी बात को संभव मान लेना, उसे जानना नहीं है। केवल मानना उपयोगी तो हो सकता है लेकिन ज्ञान नहीं हो सकता। उन शब्दों के पीछे छिपी वास्तविकता को जाने बिना ज्ञान पाना संभव नहीं है।

जहां प्रभाव मॉडल सबसे कमजोर है, वहीं अंतर्दृष्टि मॉडल सबसे मजबूत है। प्रभाव मॉडल ज्ञान को सहेज कर रखने के अपने लक्ष्य में नवाचार को बढ़ावा नहीं देता जबकि अंतर्दृष्टि मॉडल आरंभ से ही शिक्षण से आने वाले नए ज्ञान की समस्या पर बात करता है। प्रभाव मॉडल समझने की प्रक्रिया को ताक पर रखकर ज्ञान के टुकड़े संभालने पर जोर देता है जबकि अंतर्दृष्टि मॉडल अंतर्दृष्टि पाने पर बल देता है। प्रभाव मॉडल सामग्री को बस दिमाग तक पहुंचा देने को असामान्य महत्त्व देता है जबकि अंतर्दृष्टि मॉडल शिक्षार्थी द्वारा स्वयं यथार्थ को समझने और ज्ञान पाने का प्रयास करने को महत्त्व देता है।

> *विवेकवान चरित्र तथा आलोचनात्मक निर्णय लेने की क्षमता का विकास वयस्क अनुभवों और आलोचना में अधिक भागीदारी से और ऐसे व्यवहार से आती है जो सीखने वाले और शिक्षक की गरिमा का सम्मान करता हो।*

फिर भी मुझे कहना चाहिए कि प्रेरक सिद्धांत के लिए ऑगस्टाइन द्वारा दिया गया उदाहरण संतोषजनक नहीं है। यदि एक शिक्षार्थी शिक्षक के शब्दों का यथार्थ नहीं जानता तो वे शब्द शोर ही हैं और अधिक से अधिक उसे स्वयं को जानने की प्रेरणा दे सकते हैं। लेकिन यदि वे सिर्फ शोर हैं तो शोर कोई प्रेरणा भी कैसे देगा ? यदि शिक्षार्थी उन शब्दों को किसी तरह समझ ही नहीं पा रहा है तो वह उनमें निहित यथार्थ कैसे खोजेगा ? ऑगस्टाइन इसकी अनुमति देते हैं कि एक शिक्षार्थी किसी यथार्थ को जाने बिना किसी बड़े या विशेषज्ञ के कहने पर, उसे मान सकता है। ऐसा व्यक्ति निश्चित परिस्थितियों में सही प्रेरणा पाकर मानने की स्थिति से ज्ञान या जानने की स्थिति में भी पहुंच सकता है। लेकिन हम यह जानना चाहते हैं कि यदि उसका आरंभिक मानना उसके लिए बिलकुल ज्ञानवर्धक नहीं था तब उस मानने के तत्व क्या रहे होंगे ? ऐसा लगता है कि प्रेरक सिद्धांत ऑगस्टाइन के मूल विरोधाभास का कोई हल हमें नहीं सौंपता है।

एक आसान बचाव तो है। क्योंकि यह विरोधाभास खुद शब्दों के अर्थ को वाक्यों का अर्थ मानने की दुविधा में है। मुझे विस्तार से बताने दीजिए। ऑगस्टाइन का मानना है कि शब्द तभी समझ आते हैं जब उनके यथार्थ से परिचय हो। यह आपत्ति शुरू में की जा सकती है कि जरूरी नहीं कि किसी शब्द का अर्थ जानने के लिए उसका खास यथार्थ भी जाना जाए। क्योंकि बिना ऐसे यथार्थ को जाने भी परिभाषा से शब्द का अर्थ पता चल सकता है। इसके बावजूद भी हम तर्क करने के लिए यह मान भी लें कि शब्द को समझने के लिए ऐसी किसी पहचान की जरूरत पड़ती है, तब भी इसका अर्थ यह नहीं है कि किसी सच्चे वाक्य को समझने के लिए उससे व्यक्त होने वाले पूरे मसले को समझने की जरूरत है। हम पूरे समय तो किसी वाक्य को उसके शब्दों और व्याकरण के सहारे समझते रहते हैं। इसलिए यह सच नहीं है कि किसी तथ्य को व्यक्त करने वाला वाक्य तब तक शिक्षार्थी के लिए महज शोर ही है, जब तक वह उस तथ्य को नहीं जानता। क्योंकि वह उसके टुकड़ों को जोड़कर अप्रत्यक्ष रूप से तो उसका अर्थ समझ ही सकता है और बाद में पता लगा सकता है कि वह सच है या झूठ।

यदि मेरा तर्क सही है तो ऑगस्टाइन का विरोधाभास इसी आधार पर खारिज किया जा सकता है कि हम बिना उनका यथार्थ जाने

कथनों को समझ सकते हैं। इसका अर्थ यह है कि भाषा के सहारे शिक्षक शिक्षार्थी को नए तथ्यों के बारे में बता सकता है। इसका निष्कर्ष संभवतः यह निकलता है कि शिक्षण का ऑगस्टाइन का प्रेरक सिद्धांत यहीं ध्वस्त भी हो जाता है। हम फिर से प्रभाव मॉडल पर ही हैं, जिसमें शिक्षक भाषा के माध्यम से शिक्षार्थी की अंतर्दृष्टि को प्रेरणा नहीं देता, बल्कि उसे नए तथ्य ही बताता है।

लेकिन बाद वाला निष्कर्ष मुझे गलत लगता है। क्योंकि इसका अर्थ यह नहीं है कि शिक्षार्थी इन तथ्यों को इसीलिए जानेगा क्योंकि ये उसे बताए गए हैं; इस बिन्दु पर ऑगस्टाइन मुझे बिलकुल ठीक लगते हैं। कुल मिलाकर ऑगस्टाइन की रुचि जानने में ही है और जानने का अर्थ सिर्फ नई जानकारी को ग्रहण और स्वीकार करना ही नहीं है। संक्षेप में, इसके लिए यह भी जरूरी है कि शिक्षार्थी उस प्राप्त सूचना की सत्यता को जांचने के लिए प्रश्न करने के अधिकार को भी अर्जित करें। नई जानकारी तो कथनों से संप्रेषित हो सकती है, लेकिन नया ज्ञान नहीं। मुझे लगता है कि ऑगस्टाइन दो अलग-अलग बातों में उलझ गए हैं। वे शब्दों के सहारे नए ज्ञान के संप्रेषण को नामुमकिन बता रहे हैं और इसके लिए उनका आधार के रूप में वे तथाकथित सूचना के संप्रेषण को भी नामुमकिन बताते हैं। मैं दूसरे आधार वाक्य को गलत बता रहा हूं। लेकिन आधार वाक्य गलत होने के बावजूद ज्ञान को लेकर ऑगस्टाइन का निष्कर्ष मुझे बिलकुल ठीक लगता है : एक वाक्य द्वारा कही गई बात को जानना उसे बता देने, उसका अर्थ समझ लेने और उसे स्वीकार कर लेने से ज्यादा कुछ है। यह एक तरह से व्यक्ति के अपने प्रयास और स्थिति द्वारा उस वाक्य के सच को परखने का अधिकार प्राप्त करना है।

इस बात को ऑगस्टाइन अपने अन्दर यथार्थ की खोज बताते हैं, जो व्यक्ति किसी विशेषज्ञ पर निर्भर रहकर नहीं, बल्कि अपने आप पूरी करता है। वे इसमें इतने व्यक्तिगत हो जाते हैं कि ज्ञान का आधार बनने के लिए विशेषज्ञ के सही तर्क को भी खारिज कर देते हैं। लेकिन उनका मुख्य शोध मुझे ठीक लगता है : ज्ञान केवल शब्दों से ही संप्रेषित नहीं किया जा सकता। क्योंकि सीखने वाले के दिमाग में सूचना का भंडार ही ज्ञान नहीं है।

निश्चित रूप से शिक्षक, अंतर्दृष्टि मॉडल के अनुसार, भाषा का इस्तेमाल करता है लेकिन उसका प्राथमिक उद्देश्य अपने कथनों को बाद के पुनरुत्पादन के लिए शिक्षार्थी के दिमाग पर छाप देना नहीं हैं। शिक्षक के कथन शिक्षार्थी की अपनी यथार्थ की खोज में माध्यम बनते हैं और इस तरह उसकी अंतर्दृष्टि बढ़ाते हैं। ऐसी अंतर्दृष्टि का संदर्भ ही शायद बताता है कि सीखे हुए को शिक्षार्थी भविष्य में नई परिस्थितियों में किस तरह इस्तेमाल कर सकता है। क्योंकि सिर्फ बाहरी सलाह से ही नहीं, बल्कि सीखे हुए का किसी यथार्थ से व्यक्तिगत संबंध बनाकर ही वह अपने सिद्धांतों का व्यवहारिक परिस्थितियों में सही इस्तेमाल कर सकता है।

साथ ही अंतर्दृष्टि मॉडल को अपनाने का अर्थ प्रभाव मॉडल को खारिज करना नहीं है। क्योंकि प्रभाव मॉडल भी कुछ सही और जरूरी बातें बताता है, बस उन्हें गलत जगह रखता है। यह लिखी हुई संस्कृति, विरासत और ज्ञान की वृद्धि को सार्वजनिक और संग्रहीत पूंजी बताता है। यह उस ज्ञान को सामूहिक विरासत के रूप में संभालने पर जोर देता है। लेकिन सार्वजनिक ज्ञान का सीखने की वृद्धि और शिक्षण से कोई लेना-देना नहीं है और इसलिए शिक्षार्थी के व्यक्तिगत ज्ञान की वृद्धि से भी उसका कोई संबंध नहीं है। ज्ञान का सार्वजनिक भंडार शिक्षक के लिए जरूर मूल सामग्री का काम करता है, लेकिन वह इसे बूंद-बूंद करके शिक्षार्थी के दिमाग में नहीं भर सकता। अपने शिक्षण के दौरान उसे ऐसे किसी सरल स्थानांतरण की उम्मीद छोड़ देनी चाहिए और सार्वजनिक ज्ञान के इस्तेमाल के लिए शिक्षार्थी की अंतर्दृष्टि को जगाने की कोशिश करनी चाहिए।

अंतर्दृष्टि मॉडल के महत्त्व के बावजूद इसमें कम से कम दो कमियां हैं। एक तो यह अंतर्दृष्टि या दृष्टि को जानने से बहुत सरलता से जोड़ता है; दूसरा, इसका प्रभाव मॉडल की तरह विशेष संज्ञानात्मक पूर्वाग्रह है। एक, तो यह मान्यता ही बहुत सरल है कि ज्ञान के लिए अंतर्निहित दृष्टि मन में जो भी है, उसके प्रति विचार का होना जरूरी है। निश्चय ही, जैसा कि हम देख चुके हैं कि जानने वाले को जानकार होने के अलावा मसले के बारे में पूरी तरह जानने के लिए कई और शर्तें भी पूरी करनी पड़ती हैं, ताकि वह इस मसले पर प्रश्नों के हल खोजने के अधिकार को प्राप्त कर सके। लेकिन यथार्थ की बौद्धिक जांच के संदर्भ में इस शर्त को समझना ही काफी नहीं है। यह तभी संभव है जब हम स्वयं को सत्य के उन सीमित उदाहरणों तक सीमित कर लें, जिन्हें देखकर या जांचकर समझा जा सके। लेकिन जैसे ही हम व्यावहारिक जीवन, विज्ञान, राजनीति शास्त्र, इतिहास या कानून की आम बातों में सामने आने वाली समस्याओं की प्रकृति को जानने पर आएंगे, हमें लगेगा कि यथार्थ के प्रति दृष्टि की यह अवधारणा असंभव रूप से सरल है। शायद दृष्टि गलत रूपक है। जानने के इन सब उदाहरणों में जो ठीक बैठता है, वह विवेचना, तर्क, निर्णय, कारणों के लाभ-हानि का मूल्यांकन, प्रमाणों का मूल्यांकन, सिद्धांतों की सार्थकता जैसी प्रक्रियाओं पर बल देने वाला कोई शब्द है। इनमें से कोई भी अंतर्दृष्टि मॉडल के ढांचे में फिट नहीं बैठती। यह मॉडल ज्ञान के चरित्र-चित्रण में सैद्धांतिक विवेचना को कोई स्थान नहीं देता। सामान्य अंतर्दृष्टि के संदर्भ में नहीं, बल्कि ऐसी सैद्धांतिक विवेचना के संदर्भ में ही ज्ञान की विशिष्टता को समझा जा सकता है।

दूसरा, अंतर्दृष्टि मॉडल में विशेष रूप से संज्ञान पर जोर दिया गया है और शिक्षण के महत्त्वपूर्ण पहलुओं को अपने में नहीं रखता। हम यह तो देख चुके हैं कि सत्य का नई परिस्थितियों में प्रयोग करने के लिए अंतर्दृष्टि मॉडल, प्रभाव मॉडल से बेहतर है क्योंकि नई परिस्थितियों में इस्तेमाल करने की क्षमता पीछे छिपे यथार्थ को जानने से बढ़ती है। लेकिन सही-गलत का निर्णय कर लेना ही काफी नहीं है, उसे कार्यान्वित करने की आदत होना भी जरूरी है और अंतर्दृष्टि अपने-आपमें ऐसी आदतों का होना सुनिश्चित नहीं करती। अंतर्दृष्टि मॉडल चरित्र की अवधारणा और उससे संबंधित दृष्टिकोण और स्वभाव के विचार पर भी कोई बात नहीं करता। यह स्पष्ट है कि चरित्र सूचना की छाप या अंतर्दृष्टि से भी परे है। क्योंकि यह आचरण के उन सामान्य सिद्धांतों से संबंधित है, जो अंतर्दृष्टि और सूचना के भंडारण से तार्किक रूप से स्वतंत्र हैं। जिसे चरित्र कहा गया है, वह सभ्यता के बाकी हिस्सों पर भी लागू होता है और इनमें वे भी शामिल हैं जो संज्ञान को नियंत्रित करते हैं। उदाहरण के लिए, विज्ञान सच्ची अंतर्दृष्टियों का संग्रह ही नहीं है, बल्कि यह निर्णय और आचरण के सिद्धांतों की जीवित परम्परा भी है। बोधगम्य अंतर्दृष्टि से परे भी सिद्धांतों के प्रति समर्पण चाहिए जिससे सार्वजनिक रूप से उपलब्ध प्रमाण और कारणों के प्रकाश में अंतर्दृष्टि की आलोचना की जा सके और उसे पाया जा सके। इसलिए अंतर्दृष्टि मॉडल की बड़ी कमी यही है कि यह सिद्धांतों और उससे जुड़े कारणों की अवधारणा पर ध्यान नहीं देता। यह ध्यान न देना बहुत गंभीर है क्योंकि सिद्धांतों और कारणों की अवधारणा में ही विवेकपूर्ण विवेचना और आलोचकीय निर्णय के साथ-साथ तर्कसंगत और नैतिक आचरण का विचार आता है।

4. नियम मॉडल

अंतर्दृष्टि मॉडल की कमियों को 'नियम मॉडल' सुधारता है। इसे मैं कांट से जोड़ता हूं। कांट सबसे अधिक दार्शनिक महत्त्व बुद्धि को देते हैं और बुद्धि हमेशा कुछ नियमों और सिद्धांतों से बंधने से संबंधित होती है। विशेष मुद्दों पर कारण हमेशा असंगति के विपरीत और औचित्य के साथ खड़ा होता है। संज्ञान के क्षेत्र में बुद्धि एक तरह से सत्य के पक्ष में उपलब्ध साक्ष्यों के प्रति न्याय और विषय की खूबियों के साथ निष्पक्ष व्यवहार करती है। नैतिकता के क्षेत्र में बुद्धि सिद्धांतों के आधार पर काम करती है इसलिए यह कार्य हवा के रुख के साथ नहीं बदलते और सत्ता या ताकतवर के पक्ष में या स्वहित या अपनी कमजोरियों के पक्ष में नहीं झुकते। संज्ञान और नैतिकता के क्षेत्र में बुद्धि हमेशा समान बुद्धि के साथ समान व्यवहार करती है और व्यक्ति ने स्वयं को जिन सिद्धांतों के लिए प्रतिबद्ध किया है उन्हीं के आधार पर न्याय करती है। इस तरह अपने आपको सिद्धांतों में बांधकर मैं स्वतंत्र हूं; यह एक ऐसे अस्तित्व के रूप में मेरी गरिमा को स्थापित करती है जिसके पास चयन की शक्ति है। लेकिन मेरी स्वतंत्र प्रतिबद्धता ही मुझे उन सिद्धांतों के पीछे चलने को बाध्य करती है, जब वे मेरे विरुद्ध होते हैं। आचरण में शुद्धता और निरंतरता का यही अर्थ है; जब मेरे हित जुड़े हों तब मैं बुद्धि को अलग तरह से समझूं या तब मैं अपने सिद्धांतों को भूल जाऊं, तब उससे बेहतर है कि मेरे कोई सिद्धांत ही न हों। इस तरह सिद्धांतों, कारणों और निरंतरता की अवधारणाएं साथ चलती हैं और वे विश्वास के संज्ञानात्मक निर्णय और आचरण के नैतिक निर्णय, दोनों पर ही लागू होती हैं। असल में वे विवेक की सामान्य अवधारणा बनाती हैं। एक विवेकशील व्यक्ति वही है जिसके अपने विचारों और काम में निरंतरता हो और निरपेक्ष तथा अपने द्वारा चुने गए सामान्य सिद्धांतों से बंधा रहे। विवेक मनुष्य की गरिमा का अभिन्न पहलू है और मानव-जाति का विवेकवान लक्ष्य है कि ऐसा समाज बन सके, जिसमें यह गरिमा बढ़े,

> *चरित्र के विकास के लिए उसे विवेकपूर्ण संवाद और आलोचनात्मक प्रतिक्रिया पर निर्भर रहना चाहिए। उसे यह भी याद रखना चाहिए कि इसका अर्थ सिखाए गए को स्वीकार करने और नकार देने, दोनों की स्वतंत्रता देना है। ...सामान्य पड़ताल में विवेक विज्ञान की नई परंपरा में आया है, जो उन सिद्धांतों को परिभाषित एवं पुनर्परिभाषित करता है और जिससे प्रमाण को सिद्धांत से जोड़ा जा सकता है जो प्रश्नों के साथ ज्यादा स्पष्ट होते जाते हैं।*

ऐसा समाज जिसमें स्वतंत्र विवेकशील प्रतिनिधियों और अंतर्राष्ट्रीय लोकतांत्रिक जनता से जुड़े मसलों पर विवेकपूर्ण निर्णय लिया जा सके। शिक्षा का उद्देश्य व्यापक अर्थ में चरित्र का विकास करना अर्थात् सैद्धांतिक सोच और कार्य का विकास करना है, जिससे मनुष्य की गरिमा दिखाई दे सके।

अंतर्दृष्टि मॉडल के विपरीत नियम मॉडल संज्ञानात्मक निर्णय में सिद्धांतों की भूमिका पर जोर देता है। अंतर्दृष्टि मॉडल का मजबूत पक्ष अभी भी रखा जा सकता है : सूचना ग्रहण करने और अपने पास रखने से भी कुछ अधिक है, जो जानने वाले को करना होगा। लेकिन अंतर्दृष्टि मॉडल की तरह यह जरूरी नहीं कि इस शर्त को सिर्फ अंतर्दृष्टि यथार्थ के प्रति दृष्टि को शामिल करने पर ही लागू किया जाए, बल्कि यह प्रश्न उठाने के रूप में विश्वासों के सत्यापन के लिए बुद्धि के सैद्धांतिक आंकलन की क्षमता को भी शामिल करती है। संक्षेप में, जानने वाला जिस विश्वास पर प्रश्न किया गया

है उसके पक्ष में तर्क करते हुए अपने विश्वास में भरोसा करने के अधिकार को अर्जित करता है। इसलिए बाहर से उसे सिखा देना ही काफी नहीं है। जानने वाले से आम तौर पर यह उम्मीद की जाती है कि वह संभाल कर रखे बासी विचार और तर्क ही न दोहराता रहे, बल्कि वह नए और वैकल्पिक तर्क खोजने की अपनी स्वायत्तता को दिखा सके। अंतर्दृष्टि मॉडल की तरह नियम मॉडल भी नए की खोज पर बहुत बल देता है।

नियम मॉडल अंतर्दृष्टि की मनोवैज्ञानिक परिघटना को भी नहीं नकारता। यह बस यही कहता है कि अंतर्दृष्टि जो निर्णय लेती है, उसके पीछे सिद्धांतों का जाल होता है। इसका मतलब यह है कि अंतर्दृष्टि व्यक्तिगत, क्षणिक या अलग-थलग नहीं है और ज्ञान की वृद्धि महज शिक्षार्थी और शिक्षक के बीच की अंतर्क्रिया से ही नहीं होती है, बल्कि इसमें विवेकसंगत सामान्य सिद्धांत भी मध्यस्थ की भूमिका निभा रहे होते हैं।

जहां पूववर्ती मॉडलों की प्रासंगिकता खासतौर से बहुत सीमित संदर्भों में संज्ञानात्मक है वहीं नियम मॉडल आचरण और संज्ञान दोनों को शामिल करता है और अपनी परिकल्पना निर्णय और विवेचना की प्रक्रियाओं को शामिल करते हुए करता है। इसके अनुसार शिक्षण को सिर्फ सूचना देना या अंतर्दृष्टि के विकास तक ही सीमित नहीं होना चाहिए, बल्कि सैद्धांतिक निर्णय लेने की क्षमता और आचरण का विकास तथा ऐसे स्वायत्त और विवेकवान चरित्र का विकास भी हो जो विज्ञान, नैतिकता और संस्कृति, तीनों के अंतर्निहित गुणों के साथ लेकर चले। यह काम यांत्रिक रूप से नहीं हो सकता। विवेकवान चरित्र तथा आलोचनात्मक निर्णय लेने की क्षमता का विकास वयस्क अनुभवों और आलोचना में अधिक भागीदारी से और ऐसे व्यवहार से आती है जो सीखने वाले और शिक्षक की गरिमा का सम्मान करता हो। बीच का यह अंतराल सिर्फ शिक्षक के प्रयासों से ही नहीं भरा जा सकता। चरित्र के विकास के लिए उसे विवेकपूर्ण संवाद और आलोचनात्मक प्रतिक्रिया पर निर्भर रहना चाहिए। उसे यह भी याद रखना चाहिए कि इसका अर्थ सिखाए गए को स्वीकार करने और नकार देने, दोनों की स्वतंत्रता देना है। कांट मानते हैं कि विवेकपूर्ण सिद्धांत किसी न किसी तरह मानव मस्तिष्क में होते ही हैं, इसलिए शिक्षा एक मजबूत नींव पर खड़ी होती है। कुछ भी हो, दांव पर बहुत कुछ लगा है क्योंकि शिक्षा की इस इमारत पर भावी मनुष्यता की जीवन की गुणवत्ता का आदर्श टिका है।

मैंने नियम मॉडल को जिस तरह बताया है इसमें कई बातें बहुत महत्त्वपूर्ण है। निश्चित रूप से विवेक एक मौलिक संज्ञानात्मक और नैतिक गुण है और एक तरह से शिक्षण के उद्देश्यों को निर्धारित करते हैं। यहां यह ध्यान रखना होगा कि 'विवेक' के कई ऐतिहासिक अर्थ हमें भरमाएं नहीं। हम बुद्धि को अनुभव या भावना के विरोध में नहीं खड़ा कर रहे और न बुद्धि की अनुशंसा ही कर रहे हैं। विवेक को यहां तार्किक प्रक्रिया का परिणाम भी नहीं बताया जा रहा है। यहां मुख्य बात शिक्षार्थी की स्वायत्तता और उसकी विश्वसनीयता और वफादारी के दावों के समर्थन में कारण खोजने का उसका अधिकार और इस तरह के खोज के सिद्धांतों से बंधे होने की बात की जा रही है।

साथ ही नियम मॉडल को स्वीकार करने का अर्थ पहले के दोनों मॉडलों की खूबियों को भुलाना नहीं है। असल में सबके सही बातों को एक साथ बड़ी आसानी से जोड़ा जा सकता है। यह प्रभाव मॉडल के ज्ञान के सामूहिक भंडार और अंतर्दृष्टि मॉडल के व्यक्तिगत और सहज ज्ञानयुक्त दृष्टिकोण के बीच एक कड़ी जोड़ते हुए विवेकपूर्ण निर्णय के लिए सामान्य सिद्धांतों को इस्तेमाल करने की बात करता है।

लेकिन नियम मॉडल, जैसा मैंने इसे प्रस्तुत किया है, कुछ ज्यादा ही औपचारिक और अमूर्त है। क्योंकि विवेकपूर्ण निर्णय के सिद्धांत हमेशा औपचारिक निरंतरता की जरूरत से ज्यादा विस्तृत और खास होते हैं। ऐसी निरंतरता निश्चय ही मूलभूत होती है, लेकिन इसकी मांगें जिस तरह से समझी जाती हैं एवं व्याख्यायित की जाती हैं और खोज या अभ्यास के किसी क्षेत्र में किस तरह लागू की जाती हैं यह क्षेत्र, ज्ञान की दशा और संबंधित कार्यप्रणाली के परिष्कार के साथ बदलते हैं। औपचारिक निरंतरता की मांगें सार्वभौमिक हो सकती हैं लेकिन अलग-अलग विज्ञान में उसके अर्थ और विधि को लागू करने वाले नियम मानव मस्तिष्क में नहीं होते। ये नियम और मानक, तकनीकें और विधियां ज्ञान के विस्तार के साथ-साथ बढ़ते हैं और विज्ञान की दुनिया में विवेक की जीवित परंपरा बनाते हैं।

मेरे खयाल से मानव मस्तिष्क की स्वाभाविक संरचना के आग्रह की बजाय परंपरा का विचार बेहतर मार्गदर्शक है। सामान्य पड़ताल में विवेक विज्ञान की नई परंपरा में आया है, जो उन सिद्धांतों को परिभाषित एवं पुनर्परिभाषित करता है और जिससे प्रमाण को सिद्धांत से जोड़ा जा सकता है जो प्रश्नों के साथ ज्यादा स्पष्ट होते जाते हैं। विज्ञान में विवेकपूर्ण निर्णय ऐसा ठोस निर्णय है जो ऐसे सिद्धांतों के आधार पर लिया जाता है। विज्ञान में विवेक पढ़ाने का अर्थ शिक्षार्थी को ऐसे सिद्धांत सिखाना है और साथ ही उसका परिचय प्राकृतिक विज्ञान की जीवित और विकसित होती परंपरा से करवाना है, जिससे विकास और लक्ष्य से उसका संबंध बन सके।

इतिहास की विद्वता भी एक सतत् व्याख्या है जो बुद्धि की औपचारिक मांग से परे निरंतरता के संदर्भ में जिसमें तकनीक और विधियों की

ठोस परंपरा रही है जो किसी भी ऐतिहासिक तथ्य के पक्ष में या विरुद्ध इतिहासकार द्वारा बुद्धि के आंकलन के लिए अपनाई गई प्रक्रियाओं और उनके आंकलन को परिभाषित करती है। इसलिए इतिहास में विवेक सिखाने का अर्थ भी शिक्षार्थी को इतिहास की विद्वता की जीवित परंपरा दिखाना है। ऐसी ही बातें कानून, दर्शन और लोकतांत्रिक समाज की राजनीति के बारे में भी कही जा सकती हैं। मूल बिन्दु यह है कि विवेक को अमूर्त और सामान्य आदर्श नहीं माना जा सकता। यह उन विकसित होती परंपराओं का हिस्सा है जिनकी मूल शर्त यह है कि किसी भी मुद्दे को सिद्धांतों से परिभाषित बुद्धि के सहारे हल किया जाए, जो निरपेक्ष और सार्वभौमिक हों। मेरे खयाल से ये परंपराएं शिक्षण को एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य देंगी।

5. निष्कर्ष

मैंने पहले भी कहा है कि ऊपर बताए गए तीनों मॉडलों में कुछ न कुछ महत्त्वपूर्ण जरूर है। प्रभाव मॉडल, जैसा मैंने कहा, सार्वजनिक रूप से ज्ञान के संग्रहण और विकास की बात करता है। शिक्षण में निश्चित रूप से हमारा उद्देश्य इस विकास को बचाना और बढ़ाना होना चाहिए। लेकिन ऐसा हम सीखने वाले को टुकड़ों-टुकड़ों में परोस कर नहीं सिखा सकते। जैसा अंतर्दृष्टि मॉडल कहता है, हम इसे शिक्षार्थी के भीतर तभी संजो सकते हैं, जब हम उसमें उस चिंगारी को भड़का पाएं जो इस ज्ञान को बचाए रखती है, उसमें अंतर्दृष्टि पैदा कर पाएं जो उस सार्वजनिक ज्ञान को अपने हिसाब से इस्तेमाल करने की उसकी कोशिश और उसे यथार्थ से जोड़ने से पैदा होती है। इसीलिए नियम मॉडल कहता है कि यथार्थ से ऐसे साक्षात्कार के लिए विवेचना और निर्णय जरूरी हैं और उनके लिए ऐसे सामान्य और निरपेक्ष सिद्धांतों की जरूरत है जो बुद्धि के मूल्यांकन को नियंत्रित करें। ऐसे मार्गदर्शक सिद्धांतों के बिना विवेकपूर्ण विवेचना की अवधारणा ही ध्वस्त हो जाती है और विवेकपूर्ण और नैतिक आचरण की अवधारणा भी अपना अर्थ खो देती है, इसीलिए विचार और कार्य के विभिन्न क्षेत्रों में शिक्षार्थी का ऐसे मूलभूत, सामान्य और निरपेक्ष सिद्धांतों से परिचय करवाना ही शिक्षण का उद्देश्य होना चाहिए।

हमें यह नहीं दिखाना चाहिए कि हमारे ये सिद्धांत अपरिवर्तनीय और स्वभाविक हैं। यही समझना काफी है कि हम उन्हें मानते हैं और जो भी हम जानते हैं, उनमें वे सर्वश्रेष्ठ हैं। जब भी अवसर और आवश्यकता हो, हमें उन्हें सुधारने के लिए भी तैयार रहना चाहिए। ऐसा सुधार तभी संभव है जब हम शिक्षार्थी में वे कई जीवित परंपराएं स्थानांतरित कर पाएं जिनमें वे सिद्धांत छिपे हैं, जिससे उनका इतिहास, आत्मा और दिशा वे जान पाएं। इस तरह

> *शिक्षक अलग से लगाया गया ऑपरेटर नहीं है जो एक बाहरी आदमी में कुछ परिवर्तन लाता है। उसका काम तो बाकी लोगों को जीवन के उस सार्वजनिक रूप को दिखाना है जो वह खुद देखता है और जिसे इस काबिल समझता है कि शिक्षार्थी भी उसे देखें। ...शिक्षण में हम शिक्षार्थी पर अपनी इच्छाएं नहीं थोपते बल्कि उसका उस विरासत से परिचय करवाते हैं, जिसमें हम जी रहे हैं और जिसके सुधार के लिए हम खुद समर्पित हैं।*

से शिक्षण शिक्षक द्वारा छात्र के व्यवहार को आकार देना या उसके दिमाग को नियंत्रित करना नहीं है, जैसा कि व्यवहारवादी मानते हैं। यह सैद्धांतिक विचार और कार्य की उन परंपराओं को शिक्षार्थी को सौंपना है, जिनसे शिक्षक और शिक्षार्थी, दोनों अपना विवेकपूर्ण जीवन बनाते हैं।

जैसा प्रो. रिचर्ड पीटर्स ने हाल ही में लिखा है,

> आलोचनात्मक विधियां जिनके द्वारा स्थापित सामग्री का मूल्यांकन, संशोधन और नई खोजों से अनुकूलन होता है, उनका सार्वजनिक मापदंड उनके साथ होता है जो अवैयक्तिक मानक की तरह खड़ा रहता है, जिसके प्रति शिक्षक और शिक्षार्थी, दोनों की निष्ठा होनी चाहिए... शिक्षा को उपचार की तरह मानना, इसे किसी दूसरे व्यक्ति पर एक ढांचा थोपने की तरह समझना या ऐसा वातावरण बनाने की तरह समझना जिसमें वह 'विकसित' हो सके, दी जाने वाली सामग्री और आलोचना व मूल्यांकन करने के लिए जरूरी मापदंड, दोनों से ही न्याय नहीं कर पाता। शिक्षक अलग से लगाया गया ऑपरेटर नहीं है जो एक बाहरी आदमी में कुछ परिवर्तन लाता है। उसका काम तो बाकी लोगों को जीवन के उस सार्वजनिक रूप को दिखाना है जो वह खुद देखता है और जिसे इस काबिल समझता है कि शिक्षार्थी भी उसे देखें।
>
> शिक्षण में हम शिक्षार्थी पर अपनी इच्छाएं नहीं थोपते बल्कि उसका उस विरासत से परिचय करवाते हैं, जिसमें हम जी रहे हैं और जिसके सुधार के लिए हम खुद समर्पित हैं। ◆

भाषान्तर : गौरव सोलंकी